अध्याय – 2

भारतीय अध्यात्म,भक्ति एवं भक्ति संगीत

प्रथम आध्याय में शोधार्थी ने, सृष्टि की उत्पत्ति के साथ साथ उसमें समाविष्ट संगीत; तथा धर्म, संस्कृति, कला के अनुलक्ष में संगीत का स्थान एवं उसका संबंध प्रस्थापित करनेका प्रयास किया है | इस सृष्टि में अंतर्भूत बुनियादी संगीत के व्यतिरिक्त; प्राग ऐतिहासिक काल से लेकर आज के आधुनिक काल तक, संगीत में आया हुआ परिवर्तन तथा उसके विकास की समीक्षा करके ‘सामगान’ से ‘ख्याल गायन’ की संगीत यात्रा के बारे में जानने की चेष्टा की है | इस आध्याय में, ‘अध्यात्म’ तथा ‘भक्ति’ में ‘साम्य’ एवं ‘वैषम्य’ को जानकार, भारतीय संगीत का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंश ‘भक्ति संगीत’ के ऊपर प्रकाश डालने के लिए; ‘भक्ति’ को समझकर, संगीत में उसकी सार्थकता सिद्ध करनेका शोधार्थी ने यथासांग प्रयास किया है|

भारतीय विचार धारा के अनुसार, यह पूरी सृष्टि दो सत्ताओं में विभाजित है – “प्रकृति” एवं “पुरुष” अर्थात एक ‘जड़’ एवं दूसरी ‘चेतन’ | इस सृष्टि की चेतन सत्ता के अंतर्गत आनेवाला “पुरुष” अर्थतः ‘मनुष्य प्राणी’ सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि केवल मनुष्य ही पूर्णत्व को प्राप्त हो सकता है| मनुष्य जीवन भौतिक एवं आत्मिक दोनों तत्वों से युक्त है| भौतिक जीवन अर्थात सांसारिक जीवन जिसमें धन-दौलत, मान- मरातब, यश-शहूरत इत्यादि महत्वपूर्ण है| आत्मिक जीवन याने अपनी आत्मा; जो सदैव चेतन है उसके बारे में जानने की जिज्ञासा रखना, उसकी संतुष्टि करना, उसे सुख देना| भौतिक या सांसारिक जीवन की श्रेष्ठता से या सांसारिक जीवन मे मिली सिद्धियों से आत्मिक जीवन कतई लाभान्वित नहीं हो सकता | क्योंकि सांसारिक जीवन क्षणिक, अस्थिर एवं कष्टों से युक्त है|

भारतीय धर्म शस्त्रों के अंतर्गत, ‘पुनर्जन्म’ के सिद्धांत को मानते हुए, प्रत्येक जन्म मे रहे अधूरे ‘कर्म’ को पूर्ण करने के लिए ही मनुष्य को बार बार जन्म लेना पड़ता है तथा ये सभी अपूर्ण कर्म मुख्यत: षडरिपु पर आधारित रहते है | इस कथन का प्रमाण हमें, भारत के ज्ञानावतार स्वामी श्री यूक्तेश्वर गिरी की पुस्तक ‘कैवल्य दर्शनम्’ के ‘अभीष्टम्’ अध्याय के चतुर्थ सूत्र से प्राप्त हो सकता है| “इतरत्र अपूर्णकामजन्मजन्मातरव्यापी दुःखम्” |[1]

अर्थात एक जन्म में अपूर्ण रही किसी भी चीज की आसक्ति, द्वेष, बदला इत्यादि भावना से पुनर्जन्म होता है| इस जन्म मृत्यु की श्रृंखला में आगे बढ़ते हुए, मनुष्य को, हर एक जन्म में कुछ ना कुछ सीखते हुए; शनै: शनै: प्रगति करते हुए मुक्ति के मार्ग पर चलना होता है | परंतु यह ‘सत्य’ ज्ञात होते हुए भी इस मुक्ति के मार्ग को अपनाना अत्यंत कठिन है| सामान्यतः मनुष्य अपनी मूल (दैवी-आत्मिक) प्रकृति से अनजान रहकर, भ्रामक तथा नाशवान इंद्रिय विषयों में आनंद को सुरक्षित करने के लिए निरर्थक रूप से यत्नशील रहेता है और इन्ही इंद्रियाधीन वस्तुओं मे शांती एवं विश्राम की खोज करता है |[2] परंतु वास्तवतः यह असंभव है | क्योंकि इस दृश्य जगत से मन को हटाकर अंतर्मुखी करना याने अपने भीतर एकाग्र करना ही ‘योग’ है;[3] जो मनुष्य को आत्मिक शांति प्रदान कर सकता है | अत: मनुष्य जितना समय स्वयं के साथ रहता है अर्थात अपनी आत्मा में मग्न रहेता है, उसे ‘आत्मानंद’ या ‘शाश्वत शांति’ की प्राप्ती होती है | और यही आत्मिक शांति पानेका अभ्यास मनुष्य जीवन को सफल बनाता है |

[1] स्वामी युकतेश्वर गिरी(2017). कैवल्य दर्शनम(चतुर्थ संस्करण). योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इंडिया, दक्षिणेश्वर, कोलकाता. पृष्ठ 57

[2] स्वामी शिवानन्द(2011). कुण्डलिनी योग. (द्वितीय संस्करण) उत्तराखंड: योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस. पृष्ठ 55

[3] स्वामी शिवानन्द(2013). जपयोग. (एकादश संस्करण) उत्तराखंड: योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस,शिवानन्द नगर, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड. पृष्ठ 9

बड़े भाग मानुष तन पावा | सुर दुर्लभ सद ग्रंथन्हि गावा ||

साधन धाम मोक्ष कर द्वारा | पाई न जेहिं परलोक सँवारा ||[4]

संत तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में मनुष्य शरीर (मानव जन्म) की महत्ता बताते हुए लिखा है; मनुष्य शरीर, जिसे प्राप्त करना देवताओं के लिए भी दुर्लभ है वह अनमोल है और बड़े भाग्य से मिलता है | क्योंकि मानव शरीर के माध्यम से ही 'आत्म साक्षात्कार' या 'मोक्ष' की प्राप्ती हो सकती है| शरीर के माध्यम से मनुष्य अगर अपने जीवन का उद्धार नहीं कर पाता; तो इस लोक मे तथा परलोक मे उसे अपार कष्टों को झेलना पड़ता है; ऐसा संत महात्माओं का कहना है | भगवद्गीता के आधार पर, मानव जीवनोद्धार के लिए कर्मयोग, भक्तियोग तथा ज्ञानयोग ये तीन प्रमुख मार्ग है | कर्म योग याने Path of Action अर्थात जीवन में किया जानेवाला प्रत्येक कर्म ईश्वर को अर्पण करना |'ज्ञान योग' याने Path of Knowledge अर्थात परमात्मा को आधार मान कर ज्ञानार्जन करके सांसारिक कामनाओं से वैराग्य तथा विवेक की प्राप्ति 'ज्ञानयोग' है |[5] भक्ति योग याने Path of Devotion अर्थात परमात्मा की शरण में जाकर, प्रगाढ़ प्रेम भाव से उसका अनुसंधान करना | एक धारणा के अनुसार योग के चार प्रकार - मंत्रयोग, हठयोग, लययोग, राजयोग|[6] सभी मार्गों का गंतव्य समान होते हुए मनुष्य, अपनी प्रकृति के अनुसार किसी एक मार्ग का चयन करके, साधन करते हुए अंतिम लक्ष तक पहूँच सकता है |

[4] गोस्वामी तुलसीदास(सं 2076). श्री रामचरितमानस(सोलहवा संस्करण). गोरखपुर : गीता प्रेस. पृष्ठ

[5] स्वामी शिवानन्द(2011). कुण्डलिनी योग. द्वितीय संस्करण) उत्तराखंड: योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस. पृष्ठ 29

[6] स्वामी शिवानन्द(2011). कुण्डलिनी योग. (द्वितीय संस्करण) उत्तराखंड: योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस. पृष्ठ 30

2.1 अध्यात्म

इस ब्रह्मांड में उत्पन्न, प्रत्येक मनुष्य जीवन के अंतिम उदेश्य के अनुसार, जन्म-मृत्यु की शृंखला से मुक्त होकर अखंड ब्रह्मानन्द की प्राप्ति करनेकी विधा को 'अध्यात्म' कहा जाता है |[7] श्रीमद्भागवद्गीता के आँठवे अध्याय में इसी संदर्भ में अर्जुन द्वारा प्रश्न पूछने पर; भगवान श्रीकृष्ण ने उत्तर देते हुए कहा है की,

अर्जुन उवाच

"किं तदब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम |

अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं कीमुच्यते ||8-1||

अधियज्ञ: कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मसूदन |

प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभि: ||8-2|

श्रीभगवानउवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते |

भूतभावोद्भवकरो विसर्ग: कर्मसञ्ज्ञित: ||8-3||"[8]

अर्थात, परम अक्षर 'ब्रह्म' है ; अपना स्वयं का स्वरूप अर्थात जीवात्मा 'अध्यात्म' के नाम से कहा जाता है | देहधारी मनुष्य अपने स्वरूप का, अर्थत: 'आत्मा' को केंद्र में रखकर जो विचार करता है, उसे "अध्यात्म" कहा जाता है | हमारे भिन्न भिन्न शास्त्रो में 'आत्मा' को परब्रह्म, परमात्मा, आत्मतत्व जैसे भिन्न भिन्न नामों से संबोधा गया है | श्रीमद्भागवद्गीता के दसवे आध्याय में भगवान श्रीकृष्ण ने अध्यात्म का महत्व स्पष्ट करते हुए कहा है की,

[7] चौबे सत्येन्द्र कुमार(2018). *अनहद की झनकार. संगीत : आध्यात्मिक साधना का सुगम मार्ग*(प्रथम संस्करण). वाराणसी : लुमिनस् बुक्स. पृष्ठ 1

[8] जयदयाल गोयन्दका. *श्रीमद्भागवद्गीता.*(अठारहवाँ पुनर्मुद्रण)गीतप्रेस, गोरखपुर. पृष्ठ 197-198

"सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन |

अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ||10-32||" [9]

उपनिषदों में अध्यात्म की विस्तृत चर्चा की गई है, जिनमें से छान्दोग्य उपनिषद में, आध्यात्मिक उत्थान के हेतु से 'उद्गीथ' उपासना का वर्णन इस प्रकार से किया गया है कि, - " इन प्राणियों का रस पृथ्वी है, पृथ्वी का रस जल है, जल का रस औषधियाँ, औषधियों का रस पुरुष, पुरुष का रस वाक् , वाक् का रस ऋक्, ऋक् का रस साम तथा साम का रस उद्गीथ है |"[10]

2.1.1 अध्यात्म की परिभाषा

2.1.1.1 ज्ञान के परिपेक्ष से

अध्यात्म शब्द दो शब्दों से बना है, अधि + आत्म; अर्थात 'स्वयं' का अध्ययन करना| याने अपने भीतर के 'चेतन' तत्व को जानना, या आत्मप्रज्ञ होना, या शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति करना| मनुष्य मे रही 'चेतना-चैतन्य' के कारण ही मनुष्य देख सकता है, सुन सकता है, सोच सकता है; क्योंकि मृत व्यक्ति की आँखें या दिमाग होते हुए भी, वह चैतन्य रहित होने से कुछ भी क्रिया कर नहीं सकता| अर्थात मनुष्य का अस्तित्व इस चैतन्य तत्व के ऊपर निर्भर है | संक्षेप मे, मनुष्य मे बसें 'आंतरिक चैतन्य' की चर्चा याने अध्यात्म | 'अध्यात्म' को और गहराई से जानने के लिए, शास्त्र संम्मत दृष्टिकोण से देखे तो; 'आत्मनी इति आध्यात्म' अर्थात अंतर्मन की ओंर मुड़ना अथवा अंतर्मुख होना | अथवा पतंजलि योगसूत्र के अनुसार 'प्रत्याहार' याने अध्यात्म | प्रत्याहार में जैसे अपने मन को सभी इन्द्रिय जनित विषयों से हटाकर अपने भीतर ले जाना होता है; यही प्रक्रिया अध्यात्म मार्ग पर आगे चलने के लिए करनी पड़ती है | संस्कृत विद्वान एवं प्रभावी वक्ता, श्रीमती धनश्री लेले 'अध्यात्म' के बारे में

[9] जयदयाल गोयन्दका. *श्रीमद्भागवद्गीता.*(अठारहवाँ पुनर्मुद्रण)गीतप्रेस, गोरखपुर. पृष्ठ 255

[10] चौबे सत्येन्द्र कुमार(2018). *अनहद की झनकार. संगीत : आध्यात्मिक साधना का सुगम मार्ग*(प्रथम संस्करण). वाराणसी : लुमिनस् बुक्स. पृष्ठ 2

विस्तार से बताती है कि, "यत् पिंडे तत् ब्रह्मांडे' | इस उक्ति के अनुसार मनुष्य, ब्रह्मांड का ही अंश है | अतः केवल 'स्वयं' को जाननेसे ब्रह्मांड के प्रति ज्ञान प्राप्त हो सकता है | दूसरे शब्दों में कहें तो अध्यात्म याने 'तत्वज्ञान' या 'दर्शन शास्त्र' अर्थात वेद-उपनिषदों का ज्ञान | दर्शन शस्त्रों के अनुसार अलग अलग धारणाओं के आधार पर अध्यात्म को समझा जा सकता है | जैसे "अहम् एव ब्रह्म" अर्थात मै ही ब्रह्म हूँ | भगवदगीता के पन्द्रहवे अध्याय के सातवे श्लोकानुसार "ममैवांशो जीवलोके"| याने सभी जीव में मेरा ही अंश है | परंतु वो 'मै' अर्थात 'ब्रह्म' या 'भगवान' सभी में रहते हुए, सभीकों दृश्यमान नहीं है; क्योंकि सर्व सामान्य मनुष्य की आँखों पर एक 'माया' रूपी आवरण रहता है और 'आत्मशोध' के मार्ग पर चलने वाले मनुष्य को ही, अंततः 'ब्रह्म' का दर्शन हो सकता है | "[11] इसी संदर्भ में, स्वामी मुक्तानन्द अपनी पुस्तक "सत्य की ओर" में लिखते है कि, " सूक्ष्मतम से सूक्ष्मतर, महानतम से महानतर, यह आत्मा सभी के हृदयों में, सतत प्रतिष्ठित है | जो इच्छाओं से मुक्त है, जिसका मन और इंद्रियाँ शुद्ध है, वह आत्मा का वैभव देखता है और दु:खों के परे चला जाता है |"[12]

2.1.1.2 व्यवहार के परिपेक्ष से

उपरोक्त विवरण से हमने देखा कि, ज्ञान के आधार पर 'आत्मा' अर्थात 'अध्यात्म' के बारे में हम केवल जानकारी प्राप्त कर सकते है | परंतु आत्मा अमूर्त है, निर्गुण है; जिसके विषय में जानने हेतु भी, इस सृष्टि चक्र को चलाने वाले (निर्गुण) परमात्मा के प्रति 'शरणागती' का भाव तथा 'अटूट विश्वास' अत्यंत जरूरी है, जो सर्व सामान्य व्यक्ति के लिए अत्यंत कठिन है | संसार में सामान्य जीवन जीते हुए, परमात्मा के प्रति अटल विश्वास बना रहे इस हेतु से; व्यावहारिक उदाहरणों द्वारा 'अध्यात्म' को समझाते हुए परम पूज्य स्वामी श्री सवितानन्द जी बताते है कि, " मनुष्य को जीवनकाल दरमियान

[11] लेले धनश्री, दूरध्वनी से साक्षात्कार, फरवरी 8, 2021

[12] स्वामी मुक्तानन्द(1997). *सत्य की ओर*(प्रथम संस्करण).चेन्नई : चित्शक्ति पब्लिकेशन्स. पृष्ठ 23

'श्रेयस' तथा 'प्रेयस' को जानना अत्यधिक महत्वपूर्ण है | 'श्रेयस' याने जो मनुष्य के लिए सदैव कल्याणकारी हो तथा 'प्रेयस' याने मनुष्य को प्रिय हो परंतु वो मनुष्य के लिए कल्याणकारी या अनुकूल न भी हो | सामान्यतः मनुष्य संसार को प्रमाण मानकर, सांसारिक वांछा में लिप्त रहता है | अर्थात ऐहिक वस्तुओं की प्राप्ति होने पर मनुष्य मुदित होता है तथा उसकी ऐहिक परिकल्पनाओं से कुछ अल्प मात्रा में भी विपरीत होने पर वह ईश्वर को दोषी मानता है | जैसे, बगीचे में पर्याप्त जगह होने के बावजूद चिड़ियाँ कई बार घर में, ट्यूब लाइट के उपर अपना घोंसला बनाने का प्रयास करती है | परंतु चिड़िया को, घर के अंदर के पंखे से खतरा होने के प्रति अवगत होने से, गृहस्वामी उस घोंसले को बनने नहीं देता; तथापि चिड़ियाँ नाराज होती है | दूसरे उदाहरण में, डॉक्टर प्रत्येक मरीज को अलग अलग इलाज बताता है जैसे किसी एक को बिस्तर पर आराम करनेकी तो, किसी को चार पाँच किलोमीटर घूमने की सलाह देता है अथवा किसी एक को दिन में चार बार खानेकी या किसी को निराहारी रहने की सलाह देता है | उपरोक्त दोनों रूपकात्मक उदाहरणों में चिड़ियाँ तथा मरीज, अपने 'श्रेयस' को न समझ पाने से दुःखी होते है | परंतु गृहस्वामी तथा डॉक्टर; केवल उनके श्रेयस को केंद्र में रखकर, उनके भविष्य को न्याय देते है | मनुष्य भी जीवन में आनेवाली परिस्थितियों के आधार पर सुख एवं दुःख की अनुभूति करता है; अपितु सर्व शक्तिमान परमेश्वर प्रायः प्रत्येक मनुष्य के श्रेयस का विचार करके, उसके लिए परिस्थिति निर्माण करता है | परंतु इंद्रियाधीन मनुष्य, अपनी मूल प्रकृति को भूलकर प्रायः दुःखी होता रहता है और ईश्वर को दोषी मानता है | **अतः इस 'श्रेयस' और 'प्रेयस' को समझकर, परम कृपालु परमात्मा में अड़ग आस्था रखते हुए प्राप्त स्थिति को स्वीकारना ही व्यवहारिक 'अध्यात्म' है तथा इसी रास्ते पर चलते हुए जीवन सुखमय होकर आगे परम सत्य की प्राप्ति संभव है |**[13]

[13] स्वामी सवितानन्द, साक्षात्कार मई10, 2019

2.1.2 अध्यात्म एवं संगीत

अध्यात्म की उपरोक्त चर्चा से हमे ज्ञात हुआ कि, " अपनी आत्मा की खोज से संबंधित सभी क्रियाओं का नाम अध्यात्म साधना है |"[14] परंतु हमें यह भी ज्ञात हुआ कि, यह साधना अमूर्त की है | तथापि मनुष्य, इंद्रियोंका दमन करके, अपने मन को अंतर्मुखी करने का प्रयास करते हुए आगे बढ़ता है तब, बंद आँखों से उसे अपने देह का संगीत अर्थात श्वास-प्रश्वास, आमाशय में प्रवाहित होनेवाला पाचक रस, रक्त का परिभ्रमण आदि ध्वनियाँ सुनाई देती है | ये सभी निरंतर चलने वाली शारीरिक ध्वनियाँ, मनुष्य अपनी दुर्बल एकाग्रता शक्ति तथा श्रवणेंद्रिय की बहिर्मुखी संवेदनशीलता के कारण, सुनने में असमर्थ होता है | परंतु इस अध्यात्म साधना के मार्ग पर अग्रसर होने पर साधक को, योगियों को ध्यान में सुनाई देनेवाली "अनाहत" ध्वनियाँ सुनाई देती है जो दस प्रकार की होती है | पहली ध्वनि – चिनी , दूसरी है – चिनी-चिनी, तीसरी है – घण्टी की, चौथी है – शंख ध्वनि, पाँचवी है – वीणा अथवा सारंगी की, छठवीं है -- झाँझ अथवा मंजीरे की, सातवी है – बाँसुरी की, आँठवी है – भेरी की, नौवीं है – मृदंग की, दसवीं है – बिजली की गड़गड़ाहट अथवा बादलों की गड़गड़ाहट की ध्वनि |[15]

इस प्रकार से 'अध्यात्म' साधना में उत्तरोत्तर उन्नत होने पर, सृष्टि का संगीत अनायास ही सुनाई देने लगता है |

[14] चौबे सत्येन्द्र कुमार(2018). *अनहद की झनकार. संगीत : आध्यात्मिक साधना का सुगम मार्ग*(प्रथम संस्करण). वाराणसी : लुमिनस् बुक्स. पृष्ठ 2

[15] स्वामी शिवानन्द(2011). *कुण्डलिनी योग.* (द्वितीय संस्करण) उत्तराखंड: योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस. पृष्ठ 159

2.2 भक्ति

भारत एक धर्म प्रधान देश होते हुए, विभिन्न जाति एवं धर्म के लोग यहाँ निवास करते है एवं; अलग अलग रस्म-रिवाजों की पारिवारिक परंपराओं के आधार पर सगुण साकार ईश्वर की या निर्गुण निराकार ब्रह्म की आराधना, उपासना करते है; जिसे हम 'भक्ति' कहते है| परंतु भारतीय धर्म शास्त्र एवं संत साहित्य के अनुसार, मनुष्य के विशुद्ध चित्त में परमेश्वर के प्रति उत्पन्न निस्वार्थ: 'अनुराग' या प्रत्येक विषय-वस्तू को परमात्मा को समर्पित करके, उसी के स्मरण में महसूस हुई व्याकुलता की अनुभूति 'भक्ति' है | हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार वेद, उपनिषद, संहिता, पुराण, ब्राह्मण, आरण्यक इत्यादि सभी ग्रंथों मे 'भक्ति' शब्द का प्रमाण मिलता है| वेदों मे भक्ति की तुलना मे 'उपासना'[16] शब्द अधिक पाया गया है| अर्थात वेदकाल में प्रधान निर्गुण 'उपासना' ने ही पुराण काल में सगुण स्वरूप धारण किया| अतः वेदकालीन कर्म, ज्ञान, उपासना का सम्मिलित रूप ही 'भक्ति' है|[17]

2.2.1 भक्ति की परिभाषा

संस्कृत भाषा के 'भंज्' एवं 'भज्' ऐसे दो धातु से उत्पन्न शब्दों के अर्थ से भक्ति शब्द की यथार्थता सिद्ध होती है| 'भंज्' धातु से 'भग्न' रूप बनता है| 'भग्न' याने टूट जाना | तथा 'भज्' धातु को जब 'क्ति' प्रत्यय लगता है याने भज् + क्ति = भक्ति | याने पहले अर्थ मे 'भक्ति' याने समाज से टूटना या विभक्त होना | अर्थात पूरा समाज जब मोह-माया की तरफ जा रहा हो तब उसमेसे एक प्रवाह का टूटकर अलग हो जाना, यह 'भक्ति' की पहली सीढ़ी है | तत् पश्चात दूसरे अर्थ में 'भज्'

[16] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 3
[17] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 3

‘सेवायां’ धातु से भज् + क्ति = भक्ति याने सेवा करना, समर्पित हो जाना| अर्थात दोनों शब्दों को सम्मिलित करके ‘भक्ति’ शब्द बनता है|[18]

स्वभावतः ही भक्ति शब्द दिव्य एवं रसमय प्रतीत होता है| क्योंकि, भक्ति मनुष्य की हृदय जनित आंतरिक प्रक्रिया होने से अर्थात भक्ति का संबंध हृदय से याने भावनाओं से होने से ‘भक्ति’ भावना प्रधान है |

अनेक संतों ने तथा सभी हिन्दू धर्मग्रंथों में भक्ति की परिभाषा दी गई है |

गरुड पुराण के अनुसार

“भज इत्येष वै धातु: सेवायां परिकीर्तितः |

तस्मात् सेवा बुधै: प्रोक्ता भक्ति साधन भूयसि ||”[19]

अर्थात ‘भक्ति’ भगवत् प्राप्ती का श्रेष्ठ साधन होनेका प्रमाण मिलता है |

भगवद गीता के 18 वे आध्याय के 55 वे श्लोक मे भगवान श्रीकृष्ण ने भी ‘भक्ति’ का उल्लेख करते हुए बताया है कि, परमोच्च भक्ति के द्वारा ही वह (मनुष्य) मुझे एवं मेरी श्रेष्ठता को तत्व से जानकार तत्काल(उसी क्षण) मुजमे ही प्रविष्ट हो जाता है|

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः |

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ||[20] 18-55

[18] ओझा योगेश,साक्षात्कार,जुलाई 5,2021

[19] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 9

[20] जयदयाल गोयन्दका. श्रीमद्भागवद्गीता.(अठारहवाँ पुनर्मुद्रण). गोरखपुर : गीतप्रेस, पृष्ठ 440

अतः, अन्य कोई अभिलाषा न रखते हुए, ईश्वर प्राप्ती का अनन्य लक्ष याने 'भक्ति' | और विस्तार से समझे तो, भगवत् कृपा की सर्वश्रेष्ठ आनंदानुभूती के साथ अंतिम लक्ष याने 'मोक्ष' प्राप्ती देनेवाला श्रेष्ठ साधन भक्ति है|

अनेक महात्माओं ने भक्ति की व्याख्या लिखी है, इनमेसें कुछ निम्नलिखित है|

'सा त्वस्मिन परमप्रेमरुपा |' [21] अर्थात ईश्वर के प्रति व्यक्त किया गया शुद्ध प्रेम ही भक्ति है|

'सा परानुरक्तिश्वरे |' [22] ईश्वर के प्रति परम अनुराग याने भक्ति |

'तैलधारासमं सदा |'[23] अर्थात तैलधार सद्दश परमात्मा के प्रति निरंतर लीन रहेनेकी वृति ही भक्ति है|

भक्ति: भज्यते सेव्यते इति भक्ति: |[24] अर्थात भक्ति याने ईश्वर सेवा |

शुद्ध सात्विक भाव से किया गया परमात्मा का अनुसंधान भक्ति है|[25]

संत श्रेष्ठ तुलसीदास जी ने

श्रीराम भक्ति को साक्षात 'चिंतामणी' कहा है |[26]

रूप गोस्वामी के अनुसार

'अन्याभिलाषिता शुन्ये, ज्ञान कर्माद्यनावृत्तम् |

---

[21] स्वामी विद्यानंद(2013). नारदीय भक्तिसूत्रे भाग 2. पुणे: अमित प्रिंटर्स एण्ड बाइन्डर्स. पृष्ठ 15

[22]अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 9

[23] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 10

[24] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 10

[25]अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 10

[26] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 19

अनुकूलेन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुपत्तम ||'[27]

भक्ति याने मन की ऐसी अवस्था; जिसमे लोभ नहीं, भय नहीं, नुकसान नहीं, दुख: नहीं केवक और केवल प्रेम मय आत्म समर्पण |[28]

अर्थात अन्य किसी इच्छा रहित, कर्म एवं वैराग्य का लोभ भी जिसमे न हो, केवल ईश्वर की तुष्टि के लिए; उसी के प्रति असीम प्रेम भाव से, उसी का किया गया विशुद्ध अनन्य चिंतन ही "भक्ति" है|

2.2.2 भक्ति के प्रकार

भक्ति कई प्रकार की होती है| एक वर्गीकरण के अनुसार 1. सकाम भक्ति तथा 2. निष्काम भक्ति

1. सकाम भक्ति:- भौतिक लाभ की इच्छा से की गई भक्ति 'सकाम' भक्ति है| जैसे धन-दौलत, रोगमुक्ति, अच्छी नौकरी या तरक्की आदि हेतु जब व्यक्ति भगवान से प्रार्थना करता है तब यह भक्ति 'सकाम' भक्ति कही जाती है|

2. निष्काम भक्ति:- बिना कोई इच्छा मन मे रखते हुए, भगवान से जो भी प्राप्त हुआ है, उसी से संतुष्ट होकर, सदैव भगवान की शरण मे रहकर; व्यक्ति, शुद्ध भाव से भगवान की प्रार्थना करता है, उसका स्मरण करता है उसे 'निष्काम' भक्ति कहा जाता है |

अन्य वर्गीकरण के अनुसार 1. अपरा भक्ति 2. परा भक्ति

[27]रूप गोस्वामी. *श्री भक्तिरसामृतसिंधु* https://www.wisdomlib.org/hinduism/book/sri-bhakti-rasamrta-sindhu/d/doc217258.html. अप्रैल 25, 2018

[28] स्वामी सवितानन्द, साक्षात्कार,मई10, 2019

1. अपरा भक्ति :- ईश्वर प्राप्ती के उद्देश्य से पूजा विधि, श्रवण, कीर्तन, मंत्रोच्चार इत्यादि करके आनंद की अनुभूति महेसुस करना यह ‘अपरा’ भक्ति है|

2. परा भक्ति:- अपरा भक्ति करते हुए, भक्त, भक्ति की उच्चतम अवस्था मे पहूँचता है| अर्थात सगुण उपासना करते करते वह निर्गुण उपासना की तरफ आगे बढ़ता है उसे ‘परा’ भक्ति कहेते है|

भागवत् पुराण में सातवे स्कन्ध में जो ‘नवधा’ भक्ति का उल्लेख मिलता है यह अपरा भक्ति है| शास्त्र सम्मत विधि विधान से युक्त होने से इस नवधा भक्ति का समावेश अपरा भक्ति मे होता है; जिसके प्रकार निम्नलिखित है – श्रवण, कीर्तन, स्मरण, सेवा, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य तथा आत्म निवेदन |[29]

देवर्षि नारद रचित भक्ति सूत्र मे ‘प्रभु भक्ति’ के ग्यारह भेद बताये है, जो निम्नलिखित है -

1. गुणमहात्म्यासक्ति	2. रूपासक्ति	3. पूजासक्ति
4. स्मरणासक्ति	5. दास्यासक्ति	6. सख्यासक्ति
7. कांतासक्ति	8. वात्सल्यासक्ति	9. आत्मनिवेदनासक्ति
10. तन्मयतासक्ति	11. परमविरहासक्ति [30]	

श्री रूप गोस्वामीजी ने भक्ति के; ‘साधन भक्ति’, ‘भाव भक्ति’ तथा ‘प्रेम भक्ति’ ऐसे तीन भेद बताए है|[31]

---

[29] नवधा भक्ति क्या है – भागवत पुराण https://www.vedicaim.com/2019/07/navdha-bhakti-bhagwat.html

[30] नारद भक्ति सूत्र https://ananddhara.files.wordpress.com/2011/01/narad-bhakti-sutras.pdf

[31] रामनाथ शर्मा, रचना शर्मा. भारतीय मनोविज्ञान-पेज 384 https://books.google.co.in/books?id=zWLk9bJX8REC&pg=PA384&lpg=PA384&dq=%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%A7%E0%A4%A8+%E0%A4%AD%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A4%BF,+%E0%A4%AD%E0

तुलसीदास जी ने भी रामचरित मानस मे भक्ति के कई भेद बताए है, इनमेसे कुछ – अनपायिनी भक्ति,अनुपा भक्ति, दृढ़ रामभक्ति, भाव भक्ति, विशुद्ध अविरल भक्ति, चिंतामणी भक्ति, प्रेम भक्ति, परम विशुद्ध भक्ति इत्यादि के साथ नवधा भक्ति का उल्लेख भी किया है|[32]

भगवत् गीता के आँठवे अध्याय के सोलहवे श्लोक अनुसार अर्थार्थीभक्ति आर्तभक्ति, जिज्ञासुभक्ति, तथा ज्ञानी भक्ति ऐसे भक्ति के चार भेद बताए है|[33]

भागवत पुराण में तामसी (हिंसा, द्वेष,मत्सरयुक्त), राजसी (ऐश्वर्य, यश इत्यादि की इच्छा से), सात्विक (पाप क्षय के हेतु से) तथा निर्गुण (नदी जैसे सागर से मिलती है वैसे निष्काम भाव से – प्रेम से की गई निष्काम भक्ति) जैसी चार प्रकार की भक्ति बतायी है|

इस प्रकार से हमारे सभी संतों ने, भक्ति मार्ग में विभिन्न प्रकार की 'भक्ति' का उल्लेख किया है| उपरोक्त सभी भक्ति के नाम पृथक होते हुए भी सभी का परम लक्ष भगवान की 'विशुद्ध भक्ति' ही है| सामान्यतः व्यक्ति जब कोई कार्य करता है तब प्रतिफल की अभिलाषा से करता है| परंतु **कोई भी फल की इच्छा के बीना किया गया परमात्मा का चिंतन ही परम 'शुद्ध' भक्ति है, जो भक्ति की 'पराकाष्ठा' है|**

2.3 भक्ति मार्ग की श्रेष्ठता एवं भक्ति तत्व

ईश्वर प्राप्ती के; कर्म, योग, एवं ज्ञान मार्ग की तुलना मे भक्ति मार्ग को अत्यंत सरल माना गया है क्योंकि कोई भी जाति-पाँति, स्त्री-पुरुष, स्थल-काल जैसे भेद बिना, कोई भी काठोर नियम, विशेष

%A4%BE%E0%A4%B5+%E0%A4%AD%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A4%BF,+%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%87%E0%A4%AE+%E0%A4%AD%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%A4%E0%A4%BF+-+

[32]भक्ति मार्ग-श्रीराम http://lordrama.co.in/bhakti-marg.html

[33] जयदयाल गोयन्दका. *श्रीमद्भागवद्गीता.*(अठारहवाँ पुनर्मुद्रण)गीतप्रेस, गोरखपुर. पृष्ठ 187

बुद्धि या दृष्टी बिना तथा देह को कोई दंड दिए बिना भक्ति मार्ग को हर कोई अपना सकता है और अपना इच्छित प्राप्त कर सकता है| अर्थात ईश्वर नाम जपने के लिए कोई विशेष योग्यता या अधिकार की आवश्यकता नहीं पड़ती | 'भक्ति' करने के लिए एकांत अनिवार्य नहीं है | सबके साथ रहेकर भी 'भक्ति' का रसपान कर सकते है| असल मे भगवान सिर्फ भाव के भूखे है और निर्मल हृदय से विशुद्ध भाव सहजतासे उभर आता है| अतः 'भक्ति मार्ग' या 'भक्तिभाव' सदैव श्रेष्ठ रहा है|

ऐसी श्रेष्ठ भक्ति का प्रमाण हमे वेदकाल में 'उपासना' शब्द के रूप मे मिलता है| श्वेताश्वतर उपनिषद में भक्ति का सुस्पष्ट प्रमाण मिलता है| तत् पश्चात रामायण, महाभारत तथा पुराणों में भक्ति संबंधी कई निर्देश या प्रमाण मिलते है | विद्यावाचस्पति श्री शंकर अभ्यंकरजी के भक्ति कोश के द्वितीय खंड अनुसार वेदकालीन निर्गुण भक्ति का पुराण काल में सगुण भक्ति मे परिवर्तन हुआ |[34] वेदकालीन यज्ञ-याग के स्थान, पुराण काल मे मूर्तिपूजा ने ले लिए और इस प्रकार से सगुणोपासना की शुरुआत होकर 'भक्ति' और भी सुलभ बन गई| भगवान श्रीराम, भगवान श्रीकृष्ण जैसे अवतारों को पुराण काल मे विशेष मान्यता मिली| भगवत् गीता तथा भागवत महापुरण जिसमे क्रमशः 'जीवन का तत्वज्ञान' तथा 'भक्ति की व्याप्ति' का वर्णन है, वो जन सामान्य को भा गया और सभी ने उसे तहे दिल से अपनाया | इसके अतिरिक्त 'नारद भक्तिसूत्र' एवं 'शांडिल्य भक्तिसूत्रों' द्वारा भक्ति का सैद्धांतिक पक्ष भी समझाया गया | तत् पश्चात हमारे सभी संतोंने इसे आम जनता तक पहुँचाया |

कुछ ग्रंथों से मिले प्रमाणानुसार, उत्तर भारत मे 'कर्म मार्ग' तथा 'ज्ञान मार्ग' की प्रधानता के उल्लेख मिलते है परंतु दक्षिण भारत के संतों ने 'विशुद्ध भक्ति' को ही उच्च स्थान दिया अतः दक्षिण भारत मे 'भक्तिमार्ग' की प्रधानता देखी जा सकती है| 'भक्ति' की व्याप्ति इतनी विस्तृत होते हुए भी भागवत महापुरण द्वारा 'भक्ति' को स्वतंत्र पुरुषार्थ के रूप में जो दर्जा (पदक्रम) मिला, उसी से

[34] अभ्यंकर शंकर(1998). भक्तिकोश, द्वितीय खंड. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 51-52

सामान्य जन, इस साधन का अपने घर मे रहेकर अभ्यास करने लगे और मानवी जीवन के अंतिम लक्ष्य तरफ़ आगे बढ़ने के लिए उनमे आत्मविश्वास निर्माण हुआ |[35]

2.4 भक्ति आंदोलन

भारत देश के सांस्कृतिक इतिहास में धर्मकारण, राजकारण, अर्थकारण, समाजकारण, वाङमय(साहित्य), विज्ञान, कला और शिक्षण जैसे प्रधान अंगों का स्थान प्रमुख होने से; देश का इतिहास अत्यंत गौरवशाली है | परंतु उससे परे, इस भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू धर्म का प्रधान अंग हमारी ‘संत परंपरा’ है | हमारी इस भारतभूमि मे अनेक ऋषि-मुनी, आचार्य एवं संतों ने जन्म लिया है और ‘आत्मसाक्षात्कार’ जैसे परमोच्च लक्ष तक पहूँचाने हेतु उनकी भूमिका अहम (महत्वपूर्ण) रही है | भारतीय संस्कृति में जगत कल्याण हेतु, ईश्वरावतार सदृश इन संतों को ही ‘सदगुरु’ मानकर ज्ञानार्जन किया जाता है; जिनकी(सदगुरु की) महत्ता ईश्वर से भी अधिक है, जो संत कबीरजी के सर्वश्रुत दोहे से स्पष्ट होती है |

गुरु गोविंद दोऊ खड़े काके लागौ पाय |

बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताय ||[36]

हजारों वर्ष पुरानी हमारी सनातन संस्कृति पर हुए अनेक आक्रमणों तथा अत्याचारों के बावजूद हमारी यह संस्कृति सचेत रहेकर आज भी उन्नति के पथ पर है इसका श्रेय केवल संत-महात्माओं के आधीन है| परमहंस योगानन्द जी, अपनी पुस्तक ‘योगी कथामृत’ में भारतीय संतों के विषय में लिखते

[35] शंकर अभ्यंकर, दूरध्वनी से साक्षात्कार, नवंबर 11, 2021

[36] स्वामी सवितानन्द, साक्षात्कार,मई10, 2019

है कि, “ ये महान विभूतियाँ भारत की सच्ची निधि है, जिन्होंने हर पीढ़ी में अवतारित होकर अपने देश की उस दुर्दैव से रक्षा की है, जिसे प्राचीन मिश्र (ईजिप्त) और बेबीलोन को भोगना पड़ा |”[37]

हमें ज्ञात है कि, वैदिक काल से ही उपासना(भक्ति) का प्रचलन था तथा उसी वैदिक काल से हमें ऋषियों-महात्माओं का प्रमाण भी मिलता है |

‘नमः ऋषिभ्य: पूर्वजेभ्य: पूर्वेभ्य: पथिकृदभ्य:|’[38]

वैदिक काल पश्चात भी ऋषि मुनियों का एवं संत महात्माओं के गौरव का प्रमाण कई ग्रंथों मे देखने मिलता है |

भागवत पुराण मे तो ऋषियों को ‘ब्रह्मविद’ सम्बोधन दिया है | [39]

गर्ग संहिता की उक्ति के अनुसार

‘नृणामन्तस्तमोहारी साधुरेव न भास्कर: |’[40]

अर्थात बाह्य अंधकार सूर्य नि:संदेह मिटता है परंतु मनुष्य के आज्ञानरूपी अंधकार को मिटाने की क्षमता सिर्फ इन ऋषि-मुनियों में है |

इस प्रकार से, यह भारत भूमि ‘संत परंपरा’ से समृद्ध होते हुए भी छठी-साँतवी शताब्दी के आसपास हमारे वैदिक हिन्दू धर्म में कुछ कमियाँ उभर आयी थी | अत्यंत महेंगे एवं जटिल कर्मकांड,

[37] परमहंस योगानन्द(1974). *योगी कथामृत* (प्रथम हिन्दी संस्करण). योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इंडिया, दक्षिणेश्वर,कोलकाता. पृष्ठ 3

[38] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड.* पुणे: आदित्य प्रकाशन l पृष्ठ 56

[39] थावरे काशीनाथ(अनुवादक). *श्रीमद्भागवतमहापुराण(सरलमराठीव्याख्यासहितम्) द्वितीय खंड.*(नवीन संस्करण). गोरखपुर : गीता प्रेस. पृष्ठ 675

[40] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड.* पुणे: आदित्य प्रकाशन l पृष्ठ 57

पशु बली प्रथा, काठोर वर्ण व्यवस्था, ब्राम्हणो का वर्चस्व तथा संस्कृत भाषा मे रचित धर्म ग्रंथों से आम लोग परेशान थे | परिणाम स्वरूप 'बौद्ध' एवं 'जैन' जैसे दो नए धर्मों का विस्तार प्रारंभ हुआ और हिन्दू(सनातन) धर्म क्षीण होने लगा| इस परिस्थिति से ऊपर उठकर **वैदिक हिन्दू धर्म की जड़े मजबूत करने के लिए; भारत के विभिन्न प्रांतों में से अनेक संतों का आविर्भाव हुआ और उन्होंने 'भक्ति' के माध्यम से धर्म की कूरितियाँ दूर करनेका प्रयास किया अर्थात 'भक्ति आंदोलन' का प्रारंभ हुआ |** इस भक्ति आंदोलन में, जुड़नेवाले देशभर के संतों के कार्य एवं योगदान[41] की समीक्षा करनेका शोधार्थी ने प्रयास किया है |

2.4.1 भक्ति आंदोलन की शुरुआत तथा अलवार और नायन्मार संत

इस भक्ति आंदोलन की शुरुआत दक्षिण भारत के तमिलनाडू क्षेत्र से हुई | तमिलनाडू की इस प्राचीन भूमि पर चोल, पाण्ड्य, चेर, कलवार, पल्लव, रट्ट, गंग, यादव इत्यादि वंशो का आधिपत्य रहा | जैन एवं बौद्ध धर्म ने भी इस भूमि मे प्रवेश किया | परंतु बारह(12) 'आलवार' और तरेसठ (63) 'नायन्मार' संतोंने भक्ति मार्ग को अपनाकर जैन धर्म का आधिपत्य समाप्त कर वैष्णव धर्म की प्रतिस्थापना की |

'आलवार' शब्द को विस्तार से जाने तो "आल" याने एकरूपता, अभिन्नता, अभेदता या गहराई तक जाना| अर्थात ईश्वर प्रेम में, जो भी कोई गहराई तक गया है वह 'आलवार'|[42] इन सभी आलवार संतों ने भक्ति की अनेक रचनाएँ लिखी जिनमें दास्यभक्ति, वात्सल्य भक्ति, एवं कांताभक्ति

---

[41] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड,* भारतीय संत. पुणे: आदित्य प्रकाशन तथा अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, प्रथम खंड,* भारतीय आचार्य. पुणे: आदित्य प्रकाशन

[42] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड,* भारतीय संत. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 286

प्रधान है| इन सभी आलवार संतों के उपदेश से दक्षिण भारत मे 'वैष्णव' भक्ति की बड़ी लहर पूरे समाज में फैल गई|

63 नायन्मार संतों ने भी शैव भक्ति के माध्यम से भक्ति मार्ग को सामान्य जन तक पहूँचाकर जैन एवं बौद्ध धर्म के प्रभुत्व को हटाने का प्रयास किया |

2.4.2 शंकराचार्य

तत् पश्चात आँठवी शताब्दी में आदि शंकराचार्य जी ने "अद्वैतवाद" का सिद्धांत देकर सम्पूर्ण देश मे भ्रमण करके सभी को एकसूत्रता में बांधने का प्रयास किया| वैसे तो 'अद्वैतवाद' निर्गुण भक्ति का द्योतक है और 'ब्रह्म सत्य जगन् मिथ्या' उसकी उक्ति है | परंतु **शोधार्थी के मतानुसार, शंकराचार्य जी के अद्वैतवाद के सिद्धांत का कारण उस समय की सामाजिक परिस्थिति अर्थात कर्मकांडों का अतिरेक था** | क्योंकि **शंकराचार्य जी ज्ञान मार्गी** होते हुए भी; आम जनता के लिए सुगमता से अनुसरणीय ऐसे **भक्ति-भक्तिमार्ग** को अपनाकर, उन्होंने अनेक **स्तोत्रों** की रचना की | शैव, वैष्णव, शाक्त, गाणपत्य तथा सौर जैसे पाँच वर्गों में विभाजित हुई हिन्दू जनता को एक साथ लाने के हेतु से "पंचायतन" पूजा की संकल्पना तत्कालीन समाज में आरूढ़ की | इसके साथ साथ सांस्कृतिक एकता एवं प्रसार और प्रचार के लिए भारत के **उत्तर में ज्योतिर्पीठ, पूर्व में गोवर्धन पीठ, दक्षिण में श्रृंगेरी पीठ तथा पश्चिम में शारदा पीठ जैसे चार पीठोंकी** स्थापना की |

2.4.3 रामानुजाचार्य

आद्य शंकराचार्य जी के बाद ग्यारहवी शताब्दी में दक्षिण भारत के तमिलनाडू में जन्मे श्री रामानुजाचार्य जी ने इस भक्ति मार्ग को आगे बढ़ाया | उन्होंने सातवी से दसवी शताब्दी के भक्ति दर्शन तथा दक्षिण के पँचरात्र परंपरा को अपने विचार का आधार बनाकर दक्षिण में शालग्राम क्षेत्र मे

रहकर बारह वर्ष तक **वैष्णव धर्म** का प्रचार किया और बाद में धर्म प्रचार के लिए पूरे देश का भ्रमण किया | 'भक्ति' याने ईश्वर का ध्यान करना,प्रार्थना करना यह माननेवाले श्री रामानुजाचार्यजी ने **'विशिष्ठ अद्वैतवाद'** का सिद्धांत दिया |

2.4.4 निम्बार्काचार्य

तत् पश्चात बारहवी शताब्दी में वैष्णव संप्रदाय के आचार्य के रूप में श्री निम्बार्काचार्य जी ने भक्ति आंदोलन को आगे बढ़ते हुए 'सनक संप्रदाय' – **'निम्बार्क संप्रदाय'** की स्थापना की; जिसमे उन्होंने राधा-कृष्ण के यूगल रूप को अपना उपास्य मानकर भक्ति का उपदेश दिया | एक दार्शनिक होने के कारण उन्होंने जगत् को **'द्वैताद्वैत'** वाद का सिद्धांत दिया |

2.4.5 मध्वाचार्य

तेरहवी शताब्दी में दक्षिण भारत के बेलग्राम के मध्वाचार्य नामक दार्शनिक आचार्य ने भक्ति मार्ग में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया | इन्होंने उपरोक्त तीनों आचार्यों के मत से हटके **"द्वैतवाद"** का – अर्थात आत्मा एवं परमात्मा दोनों भिन्न भिन्न है यह सिद्धांत जगत को दिया| भगवान विष्णु को सर्वोच्च तत्व मानकर, मध्वाचार्य जी ने विष्णु भक्ति का प्रचार करके 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की | इन्होंने **उड़पी मे** 8 तथा पूरे **भारत मे 24 माधव मठोंकी** स्थापना की |

2.4.6 रामानन्द

उपरोक्त सभी संतों एवं आचार्यों कें अथक कार्य से अब तक दक्षिण भारत में 'भक्ति' का काफ़ी विस्तार हुआ था | परंतु इस समय में, उत्तर भारत में इस्लामी आक्रमणों की वजह से राजकीय एवं सांस्कृतिक अस्थिरता थी| इस्लाम धर्म प्रचार एवं सूफी संप्रदाय की प्रधानता के साथ बौद्ध, जैन जैसे अनेक छोटे बड़े संप्रदाय अस्तित्व में आए थे | इसी काल में चौदहवी शताब्दी मे इलाहबाद में,

श्री रामानन्द का जन्म हुआ| वे **'श्रीराम'** को अपना आराध्य मानते थे| श्री रामानुजाचार्य से प्रभावित होकर शुरू मे इन्होंने **'विशिष्ठ अद्वैतवाद'** को अपनाया परंतु बाद मे वाराणसी को अपना कार्य क्षेत्र बनाते हुए, श्रीराम एवं सीता के आदर्श स्वरूप को जनता के सामने रखकर रामभक्ति की पावन धारा को जन-जन तक पहुँचाया| इन्होंने अपनी भक्ति के प्रचार में 'संस्कृत' की जगह लोकभाषा **'हिन्दी'** को माध्यम बनाया अतः आम जनता श्रीराम-सीता की भक्तिधारा मे सम्मिलित होने लगी | वे भक्ति मार्ग के ऐसे सोपान थे जिन्होंने कोई भी जाति-पाँति, ऊँच-नीच के भेदभाव बिना रामभक्ति की विशुद्ध सरिता को गरीबों एवं वंचितों की झोपड़ी तक पहुँचाया और; कबीर, आनंतानन्द, पीपा, सेन, रैदास जैसे सभी वर्णों के बारह प्रमुख शिष्य बनाएं |

अतः

"भक्ति द्रविड उपजी, लायो रामानन्द"[43] इस प्रसिद्ध लोकोक्ति के अनुसार उत्तर भारत में भक्ति मार्ग का प्रचार करने वाले प्रवर्तक के रूप में रामानन्द जी का स्थान अद्वितीय है|

2.4.7 वल्लभाचार्य

इसी चौदहवी शताब्दी में भक्ति आंदोलन के पथ पर, सगुण भक्ति धारा की कृष्ण भक्ति शाखा के आधारस्तम्भ एवं **'पुष्टिमार्ग'** के प्रणेता के रूप मे वल्लभाचार्य जी का कार्य विशेष है| वे भी मूलतः दक्षिण भारत आंध्र प्रदेश से होते हुए भी इनकी कार्य भूमि उत्तर भारत में **काशी, प्रयाग, मथुरा तथा ब्रज** रही है| इन्होंने भगवान श्रीकृष्ण के **'बाल स्वरूप'** की पूजा करके सामान्य जन मानस को **'वात्सल्य भक्ति'** की तरफ मोड़ा जो 'पुष्टिमार्ग' कहेलाता है| अर्थात बालक जैसे नि:ष्कपट एवं पवित्र भाव से

[43] रिनाहिते पल्लवी(2015).मध्यकालीन *सामाजिक परिप्रेक्ष्य में संत एवं भक्त कवियों की भूमिका*.इंटरनेशनल जर्नल ऑफ अप्लाइड रिसर्च,1(10),164-166 https://www.allresearchjournal.com/archives/2015/vol1issue10/PartC/1-10-56.pdf

भगवान को भजेंगे तो ही अनुग्रह होगा और यही अनुग्रह याने ‘पुष्टी’ है, यह भावना से लोगों को अवगत किया | अर्थात पुष्टिमार्ग में भक्त को केवल और केवल भगवत प्राप्ती की आकांक्षा रहती है |

2.4.8 चैतन्य महाप्रभू

दक्षिण भारत से निकली हुई इस भक्ति की लहेर ने अब पूर्व भारत याने बंगाल प्रांत में भी अपना स्थान जमाया | पंद्रहवी शताब्दी में इस भक्ति काल के वैष्णव संत श्री चैतन्य महाप्रभू जी का जन्म पश्चिम बंगाल में हुआ | बंगाल कृष्ण भक्ति से परिचित था तथापि राधा एवं गोपियों के, अव्याभिचारी दिव्य प्रेम से पुष्ट हुई **“मधुराभक्ति”** के माध्यम से राधा-कृष्ण का विशुद्ध स्वरूप इन्होंने लोगों के सामने रखा | इनके भक्ति मार्ग का सार याने; केवल श्रीकृष्ण इष्टदैवत, वृंदावन श्रेष्ठ धाम, कृष्णनामसंकीर्तन ही भक्ति तथा श्रीमद्भागवात प्रमाणग्रंथ जैसे चार तत्व | इसी की पुष्टि करते हुअे प्रभूपाद स्वामी ने अपनी भगवद्गीता में श्लोक लिखा है कि,

“ एकं शास्त्रं देवकीपुत्रगीतम् , एको देवो देवकीपुत्र एव |
एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा ||”[44]

इन्होंने स्थापित किये वैष्णव संप्रदाय को, **‘गौड़ीय’ संप्रदाय** तथा इनके चिंतन को **‘अचिंत्यभेदाभेदवाद’** कहते है; अर्थात भगवान श्रीकृष्ण ही अंतिम, अभेद तत्व है |

भक्ति आन्दोलन की इस धारा को, श्री रामानन्द के शिष्य संत कबीर और संत रैदास जी ने और आगे बढ़ाया | इसी समयकाल दरमियान अर्थात तेरह चौदहवी से सोलह सत्रहवी शताब्दी तक उत्तर भारत में संत कबीर, संत रैदास, संत सूरदास, संतश्रेष्ठ तुलसीदास, राजस्थान मे संत दादू दयाल, संत मीराबाई; गुजरात मे संत कवि नरसिंह मेहता, पंजाब मे गुरु नानक देव जी, महाराष्ट्र मे संत

[44] प्रभूपाद स्वामी(2018). *भगवद्गीता जशी आहे तशी.* मुंबई : भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, पृष्ठ 27

एकनाथ, संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव, संत तुकाराम, समर्थ रामदास स्वामी जैसे महान संत हुए |इन सभी संतोंने इस महा भक्ति आंदोलन मे अतुलनीय योगदान दिया |

2.4.9 कबीर

कबीर जी का जीवनदर्शन रहस्यमय होते हुए भी; दार्शनिक, ज्ञानी ऐसे संत कबीर जी ने कोई भी धर्म या संप्रदाय से परे जाकर; बाह्य आडम्बर की उपेक्षा करते हुए, केवल शुद्ध **'निर्गुण'** भक्ति परंपरा को बढ़ावा दिया | स्वयं अनपढ़ होने के कारण उनकी सारी रचनाएँ मौखिक होती थी | इनकी भक्ति निर्गुण होते हुए भी, भगवान **'श्रीराम'** के कई उल्लेख इनके काव्य में मिलते है; अपितु इनके **'राम'** याने **(निर्गुण)परब्रह्म-परमेश्वर** | धर्म निरपेक्ष परंतु भक्ति पूर्ण रचनाओं के माध्यम से कबीर जी ने जनता को सत्य, सदाचार जैसे जीवन विषयक ज्ञान का उपदेश दिया |

2.4.10 सूरदास

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शिष्यों में **'शुद्धाद्वैत'** वाद एवं **'पुष्टिमार्ग'** को समन्वित करनेवाले, **'अष्टछाप'** संत कवियों में सूरदास प्रमुख थे | इन्होंने कृष्ण लीलाओं का वर्णन करनेवाली, श्रृंगार एवं वात्सल्य रस से ओतप्रोत लगभग सवा लाख पदों की रचनाएँ लिखी; जो सभी गेय एवं अत्यंत मधुर है | 'पुष्टिमार्ग' का सार समझानेवाला **"श्रीकृष्ण: शरणं मम्"** महामंत्र देकर भगवान कृष्ण से जुड़नेका सरल तरीका लोगोंको बताया |

2.4.11 तुलसीदास

भगवान श्रीराम मे प्रीती रखानेवाले, संत शिरोमणि तुलसीदास जी का इस भक्ति आन्दोलनमें अपूर्व योगदान रहा है | उन्होंने तत्कालीन परिस्थिति अनुसार हिन्दू धर्म एवं संस्कृतिका, **'राम'** नाम की संजीवनी से पुनरुत्थान किया | इन्होंने **"रामचरित मानस", "विनय पत्रिका"** जैसी अत्यंत सरल-

सुबोध अवधी भाषा में लिखित अपनी रचनाओं से विशुद्ध भक्ति तत्व प्रतिपादित करके जनमानस को रामनाम रूपी कल्पवृक्ष से परिचित करवाया; तथा तत्कालीन समाज में 'सनातन धर्म' की नीव पुनःप्रस्थापित की |

2.4.12 गुरु नानकदेव

शीख संप्रदाय के प्रवर्तक एवं आद्य गुरु के रूप में सन् 1469 में पंजाब के लाहोर निकट तलवंडी गाँव में नानकदेव जी ने जन्म लिया | बाल्यकाल से ही चिंतनशील एवं सत्संग प्रेमी नानकदेव, अक्सर जंगल के एकांत में ध्यान लगाते थे | स्कूल की पढ़ाई के प्रति नीरस होते हुए भी; मूलभूत पढ़ाई तथा पर्शियन एवं अरेबिक का अध्ययन उन्होंने किया था | नानकजी के जन्म के समय में, अनेक मुस्लिम आक्रमणों की वजह से देश टूट गया था तथा वैदिक धर्म की शुचिता एवं वैभव नष्ट होकर तांत्रिक वामाचार उभर आया था | ऐसे समय में **सनातन धर्म का रक्षण करके राजकीय शौर्य एवं पुरुषार्थ दिखाने की आवश्यकता के लक्ष्य से,** उन्होंने ऐसे **"सीख" संप्रदाय** की स्थापना की, जिसके प्रत्येक गुरु के **हाथ मे खड्गरूप शक्ति, मस्तिष्क में देदीप्यमान राष्ट्रभक्ति, तथा हृदय में परमात्मा के प्रति अटूट आस्था थी** | इसी संप्रदाय के अंतर्गत नानकदेव ने 'लंगर' याने सहभोजन की प्रथा की शुरुआत करके अनेक अनाथों को अन्नदान किया, जिसका प्रचलन आज तक जारी है |

2.4.13 दादू दयाल

निर्गुण भक्ति परंपरा के संत कवि दादू दयाल ने सरलता, समर्पण, सेवा और प्रेम इस चतुःसूत्री पर आधारित 'ब्रह्म' संप्रदाय की स्थापना की | स्वानुभूत एवं सरल **राजस्थानी हिन्दी** मे रचित **'दादू वाणी'** नामक रचना उस काल मे अत्यंत लोकप्रिय रही थी |

2.4.14 मीराबाई

इसी कालखंड में (15-16 वी शताब्दी) श्रीकृष्ण को सर्वस्व: मानने वाली, स्त्री संत मीराबाई का स्थान अद्वितीय है| **'मधुराभक्ति'** मे सदैव लीन रहेनेवाली मीराबाई ने अपनी रचनाओं मे **दाम्पत्य भाव** से, श्रीकृष्ण के सगुण रूप का वर्णन 'रासलीला'ओं के माध्यम से किया है| इन्होंने कोई भी संप्रदाय की पुष्टी किये बिना **केवल प्रेममय भक्ति को ही सर्वोच्च माना** |

2.4.15 ज्ञानेश्वर

महाराष्ट्र की संत परंपरा में, भक्ति का पुनरुत्थान करनेवाले प्रमुख संतों में; संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव, संत एकनाथ, संत तुकाराम तथा समर्थ रामदास स्वामी को इस संस्कृति का पंचप्राण माना जाता है | इनके कार्य के बारे में संक्षेप में, स्त्री संत बहिणाबाई ने लिखा है की,

" संतकृपा झाली | इमारत फळा आली || 1 ||
ज्ञानदेवें रचिला पाया | उभारिलें देवालया || 2 ||
नामा तयाचा किंकर | तेणें केला हा विस्तार || 3 ||
जनार्दन एकनाथ | खांब दिधला भागवत || 4 ||
तुका झालासे कळस | भजन करा सावकाश || 5 ||" [45]

इस कलश के ऊपर, आकाशोन्मुख लहराने वाली ध्वजासमान कार्य 'समर्थ रामदास स्वामी' ने इस भक्ति परंपरा में किया है |

बारहवी-तेरहवी शताब्दी में, महराष्ट्रीयन संस्कृति की आत्मा समान श्री ज्ञानेश्वर के जन्म के समय महाराष्ट्र में; केवल संस्कृत भाषी ग्रंथ, ब्राम्हणो का वर्चस्व, शैव-वैष्णव झगड़ा इत्यादि सामाजिक

[45] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड*. पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 414

दूषणों से लोग परेशान थे | इसी समय मे, **‘अद्वैतवाद’ एवं ‘पराभक्ति’** का अंगीकार करनेवाले ज्ञानेश्वर जी ने **‘हरिहर’** समन्वयात्मक विठ्ठल रूप का जनमानस के हृदय मे स्थान निर्माण किया| अपनी वैदिक परंपरा एवं वर्णाश्रम परंपरा का आदर करते हुए भक्ति के माध्यम से एक दुसरें से जुड़ना, अर्थात विश्व व्यापक भक्ति तत्व का योगदान इन्होंने जगत् को दिया | रुढ़ि परंपरा से ग्रसित समाज में, **‘भक्तिमार्ग’ को जनसामान्य तक सभीकों उपलब्ध करवाया |** इस अद्वैती संत ने विश्वकल्याण की भावना से, समाज मे रहे अज्ञान को दूर करके भगवत् भक्ति द्वारा सभी को परमार्थ की ओंर निर्देशित किया |

2.4.16 नामदेव

संत ज्ञानेश्वर के समकालीन संत नामदेव को भगवत् **‘नामजप’** का आद्य प्रणेता माना जाता है | शैव और वैष्णव दो विभिन्न पंथ मानकर उस संदर्भ में विवादित समाज को **‘हरी’** और **‘हर’** दोनों ही **विठ्ठल** रूप में सम्मिमित होने का विश्वास इन्होंने दिलाया| लोगोंको समझाते हुए नामदेव महाराज कहते थे कि, ‘विठ्ठल याने विष्णू रूप है तथा उनके मस्तक पर शिवलिंग के स्वरूप में शंकर स्थित है अतः दोनों एक ही है |’ इन्होंने प्रभु रामचन्द्र की रामलीला के माध्यम से रामभक्ति की अलौकिकता बतायी | सच्ची भक्ति याने शुद्ध अंतःकरण पूर्वक भाव से लिया गया भगवत् नाम और इनमे राम एवं कृष्ण में ‘अभेद’ बताते हुए **“रामकृष्ण हरी”** इस मंत्र को अनन्य स्थान दिया | नामदेव महाराज ने अपनी भक्ति यात्रा को केवल महाराष्ट्र तक सीमित न रखते हुए इसे उत्तर दिशा की ओंर बढ़ाया | इन्होंने मराठी के साथ साथ हिन्दी भाषा में रचना करके गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान में भक्ति की लहर निर्माण की | भागवत परंपरा को, **पंजाब** में इनके द्वारा श्रेष्ठत्व प्राप्त हुआ | कीर्तन पद्धती का अवलंबन करके इन्होंने शीख समाज का इस प्रकार से मन जीत लिया कि, **“श्री गुरुग्रंथसाहिब”** जैसे पवित्र सिख ग्रंथ मे इनकी **60 रचनाएँ** उल्लीखित है| बहोरदास निर्मित पंजाब

का **'गुरुद्वारा, बाबा नामदेवजी मंदिर'** के नाम से प्रसिद्ध है तथा **राजस्थान** में इनके कई **मंदिर** देखने मिलते है |

2.4.17 एकनाथ

संत ज्ञानेश्वर जी के निर्वाण के बाद करीब 237 साल के बाद, पंद्रहवी शती में संत एकनाथजी का जन्म हुआ | इस काल में हिन्दू धर्म और संस्कृति छिन्न-भिन्न करनेवाले यवन आक्रमणों से, उत्तर भारत पूरी तरह से प्रभावित था परंतु उसकी लहर दक्षिण की तरफ़ बढ़ रही थी, जिसका कुछ परिणाम महाराष्ट्र झेल रहा था | इसी काल में, संत ज्ञानेश्वर जी को सर्वस्व माननेवाले, एकनाथ जी ने **'भागवत'** धर्म की बुनियाद मजबूत की | संत एकनाथ आदर्श गृहस्थाश्रमी, उत्तम कीर्तन-प्रवचनकार, महान कवि एवं तत्वज्ञ होते हुए **"शांति की मूर्ति"** थे; जिसके विषय में कई उदाहरण उनकी जीवनी में मिलते है | परमशांती प्रिय संत एकनाथजी को क्रोधित करानेके कई प्रयोग तत्कालीन दुर्जन करते थे जैसे- गोदावरी मे स्नान करके बाहर निकालने के बाद, एक यवन उनके उपर बार बार थूँकता रहा और उतनी ही शांती से वे बार बार नहाते रहे; अंत में थककर, यवन उनके चरणों में गिर पडा | पैसे की लालच में आकर एक ब्राह्मण ने एकनाथ जी को अत्यंत परेशान करनेका प्रयत्न किया परंतु वह ब्राह्मण भी अयशस्वी हुआ और उनके चरणों में झुक गया | संत एकनाथ जी जन्म से ब्राह्मण होते हुए भी, समाज के सभी स्तरों के, खास तौर पर निम्न स्तरों के लोगोके प्रति उन्हे विशेष स्नेह था | उस काल की परिस्थितीनुरूप, सर्वसमावेशक अद्वैत तत्वज्ञान को पुरस्कृत करते हुए **'भक्तिमार्ग'** का अवलंबन करके, भगवत **'नामजप'** के अनन्य साधारण महत्व को समझाते हुए; तत्कालीन समाज में हिन्दू धर्म, संस्कृति तथा राजसत्ता को मजबूत एवं परस्पर अनुरूप बनाने के लिए अद्भुत क्रांतिकारी कार्य किया |

2.4.18 तुकाराम

भगवद्भक्ति की विशुद्ध परंपरा आँठ पीढ़ियों से चलाने वाले 'विठ्ठल भक्त', **'वारकरी'** कुल में सन् 1608 में संत तुकाराम का जन्म हुआ| परंपरा से चला आया पैतृक व्यापार एवं विठ्ठल भक्ति के संस्कारों से तुकाराम जी का बचपन सुखमय बीता था | युवावस्था में प्रथम पत्नी बीमार होने से माता पिता ने ही उनका दूसरा विवाह करवाया था | परंतु माता,पिता, प्रथम पत्नी, ज्येष्ठ पुत्र तथा भाभी के एक के बाद एक आकस्मिक निधन से तुकाराम जी को संसार से परम वैराग्य आया और पारमार्थिक उन्नति के लिए वे भांबनाथ की टेकरी पर जाकर साधना करने लगे | तुकाराम निम्न जाति के होने से, उनकी साधना, उन्नति तथा उनके द्वारा दिए गए प्रवचन तथा उपदेश के विषय में तत्कालीन समाज ने उन्हे अपार कष्ट दिए परंतु सहनशीलता की परिसीमा होनेवाले तुकाराम महाराज ने इसे अत्यंत सहजता से सहन किया | संत एकनाथ के काल से बिगड़ी हुई परिस्थिति में, लोगों को सत्संग की तरफ मोड़ने के लिए; **विठ्ठल को 'माता' और भक्त याने 'बालक'**, इस निष्पाप भाव से भक्ति की संकल्पना अपने **'अभंगों'** द्वारा जनता के सामने रखी | गृहस्थी मनुष्यों को सन्मार्ग दिखाते हुए, भगवत् नामजप (विठ्ठल नाम)को सर्वोच्च भक्ति मानते हुए अत्यंत प्रतिकूल परिस्थिति में 'भागवत' धर्म का प्रचार प्रसार करके, उसकी महत्ता को कलश पर बिठाया | तुकाराम जी ने एकांत में किये अपने प्रदीर्घ अभ्यास द्वारा; 'नीति', 'प्रीति' तथा 'मति' जैसे तीन स्तंभो पर आधारित 'भक्तिरूपी ब्रह्मरस' से दूषित समाज को 'विरक्ति' की दवा पिलाकर रोग मुक्त किया |

2.4.19 समर्थ रामदास

धर्म तथा देश दोनों के पुनरुत्थान के हेतु से, धर्मसत्ता तथा राजसत्ता का संयोग करने के लिए, केवल धार्मिक भक्ति की अपेक्षा धर्म मे रही शक्ति से देश का उद्धार शक्य है; इस नविनतम विचार धारा से युवा पीढ़ी में **"राष्ट्रवाद" का सिंचन** करनेवाले समर्थ रामदास स्वामी, संत तुकाराम के सम

कालीन संत तथा **शिवाजी महाराज के गुरु थे** |प्रभु **श्रीराम** को वे अपना गुरु मानते थे | इन्होंने, भक्ति योग के आधार पर, सदाचार एवं नीतियुक्त जीवन हेतु, पापबुद्धि तथा विकार रहित मानवी मन के विकास के लिए उपदेशरूप श्लोकों की निर्मिती की | रामदास स्वामी, ऐहिक एवं पारमार्थिक उत्कर्ष से ही व्यक्ति का, समाज का, अंत में राष्ट्र विकास शक्य है; तत्कालीन समाज की आवश्यकतानुरूप इस विचार से जनता को अवगत करानेवाले दूरदर्शी संत थे |

2.4.20 अखो भगत

इसी काल दरमियान गुजरात के दो संत 'अखो भगत' तथा 'नरसी मेहता' का योगदान महत्वपूर्ण है | अखो भगत ने अपनी **'साखी' या 'छप्पय'** के माध्यम से जन सामान्य को उपदेश दिया की, परमात्मा की प्राप्ति के लिए, सच्चे भक्त की अवस्था पानी के बिना तड़पनेवाली मछली जैसी होनी चाहिए | शबरी ने वेद या संस्कृत की पढ़ाई नहीं की थी| परंतु **हरीदर्शन के लिए, केवल हृदय का छल कपट रहित शुद्ध भाव जरूरी है |**

2.4.21 नरसी मेहता

संत कवि नरसी मेहता भगवान **श्रीकृष्ण के भक्त** थे | इनकी रचनाओं में, कवि **जयदेव के गीतगोविंद** की तथा संत नामदेव महाराज के साहित्य की छाया दिखती है, अतः वे इसके अभ्यासक होंगे ऐसा अनुमान लगाया जाता है | इन्होंने विशाल भक्तिकाव्य साहित्य का सृजन किया, जिनमेसे श्रृंगार, शांत, करूण, अद्भुत जैसे रसों की स्वाभाविक निर्मिती होती है | भक्ति काव्य के द्वारा इन्होंने लोगों के हृदय में श्रद्धा जागृत की | **"वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीड़ पराई जाणे रे"** इस भजन के द्वारा इन्होंने भक्ति की वैश्विक अनुभूति का अहसास दिलाया |

2.5 अध्यात्म एवं भक्ति की तुलना

अध्यात्म एवं भक्ति के उपरोक्त विवेचन से यह ज्ञात होता है कि, अंतिम लक्ष याने 'आत्मतत्व' को पाने के लिए मनुष्य को कर्म, ज्ञान, भक्ति या योग(हठ) में से किसी एक मार्ग का चयन करके उसका निरंतर अभ्यास करना पड़ता है | परंतु मनुष्य मे रहा यह 'आत्मतत्व' या मनुष्य का 'अंतरंग' जो दृश्यमान नहीं है, उसे खोजने की क्षमता अर्थात 'ज्ञानमार्ग' की साधना सभी के लिए संभव नहीं है | अतः हमारे ऋषि- मुनियों ने, जन सामान्य, सुगमता से आत्मबोध की प्राप्ति कर सके, इस हेतु से 'सगुण' भक्ति की अर्थात 'मूर्ती स्वरूप' ईश्वर की कल्पना की; जिसमे मनुष्य तथा ईश्वर भिन्न होने से, ईश्वर के साथ एकरूप होनेका भाव स्वाभाविकता से ही निर्माण हो सकता है | अर्थात **मनुष्य तथा ईश्वर के द्वैत से 'भक्तिमार्ग' का उदय हुआ |** भक्ति में 'ईश्वर' के प्रति परम प्रेममय समर्पण होता है तथा अध्यात्म मे 'स्वयं' के प्रति अर्थात शरीर की अवहेलना करके अदृश्य 'आत्मा 'के प्रति समर्पण करना पड़ता है | मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक का पूरा जीवन या उसकी पहचान शरीर के माध्यम से होते हुए भी, **अध्यात्म में (शरीर की उपेक्षा कर) निर्गुण निराकार 'आत्मा' की ओर; तथा भक्ति में स्वयं को मिटाकर अपने सगुण साकार 'इष्ट' के लिए समर्पण** करना होता है | अर्थात **दोनों मे समर्पण** है, दोनों ही का गंतव्य स्थान एक ही है, पर मार्ग पृथक रहते है | संस्कृत विद्वान श्रीमती धनश्री लेले, भक्ति तथा अध्यात्म को, समदिशीय चलनेवाली प्रक्रियाएँ मानते हुए बताती है की, "भगवान श्रीकृष्ण ने भगवत् गीता के तीसरे आध्याय में; प्रथमतः अध्यात्म याने 'ज्ञान' की चर्चा की है बाद मे 'भक्ति' का विस्तृत वर्णन किया है | क्योंकि 'आत्मतत्व', ज्ञानयोगी (ज्ञान के जिज्ञासु) लोगों के लिए संक्षेप में वर्णित है पर 'भक्ति' अलग अलग प्रकार से की जा सकती है; अतः भक्ति परंपरा मे वैविध्य होने से भक्ति का व्यापक विवरण भगवान ने बताया है | अध्यात्म की एक व्याख्या के अनुसार 'आत्मनि इति अध्यात्म' | अर्थात अपने भीतर की ओंर प्रवेश करना, अपनी आत्मा के अधिकाधिक निकट जाना याने व्यक्तिगत उन्नति करना ही 'अध्यात्म' है | परंतु भक्ति में स्वयं के साथ सभी को उन्नत बनाना; अर्थात

प्रेममय शरणागती की स्वानुभूति को सभी के साथ बाँटकर, सभी को उस अनुभूति से परिचित कराना और भगवत् प्रेम का रसपान कराना 'भक्ति' है | **अध्यात्म** की एक अवस्था या एक चरण पर **'दिव्य संगीत'** की **अनुभूति** होती है तथा भक्ति के माध्यम से भगवत् प्राप्ति के मार्ग में, भक्ति की **'आर्तता' संगीत के बिना अधूरी है |** इस प्रकार से अध्यात्म और भक्ति दोनों समांतर चलनेवाली धाराएँ है |[46] अतः भक्ति(शरणागती) एवं ज्ञान (प्राप्ती, आश्रय में जाना) मूलतः एक ही है यही सभी संतों तथा आचार्यों का मानना है |[47]

2.6 भक्ति संगीत

पुराणों की एक कथा अनुसार, देवर्षि नारद एकबार सृष्टि के आध्यात्मिक प्रगति देखने के लिए लंबी यात्रा पर निकल पड़ते है | इस यात्रा दरमियान, वे जब लोगों से मिलते थे तब लोग उन्हे, "ईश्वर प्राप्ती अत्यंत कठिन होनेकी" शिकायत करते और कोई सरल उपाय बताने की बिनती करते थे | नारदजी उन्हे, साक्षात भगवान से इसका उपाय जानकर बतानेका आश्वासन देकर स्वर्ग मे लौटते है और भगवान विष्णू से इस के बारेमे चर्चा करते है | तब भगवान विष्णू स्वयं इसका उत्तर देते हुए कहेते है कि,

"नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न वा |
मद भक्त यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदः ||"[48]

---

[46] लेले धनश्री, साक्षात्कार, फरवरी 8, 2021

[47] परमहंस योगानन्द(2005). *योगी कथामृत.* कोलकता: जैको पब्लिशिंग हाऊस. पृष्ठ 117

[48] शर्मा श्रीराम(2007). *शब्द ब्रह्म- नाद ब्रह्म.* युगनिर्माण योजना,गायत्री तपोभूमि,मथुरा.पृष्ठ 3

अर्थात मैं वैकुंठ में या योगीओं के ह्रदय मे नहीं रहता पर जहाँ मेरे भक्त भजन-कीर्तन करते है वहाँ मेरा वास होता है | अर्थात भजन कीर्तन के माध्यम से ही, सरलता से ईश्वर के समीप पहुँच सकते है |

भगवत गीता के दसवे आध्याय के बाईसवे श्लोक मे भी भगवान कृष्ण ने कहा है कि, "वेदनां सामवेदोऽस्मि"|[49] अर्थात सारे वेदों में मै 'सामवेद' हूँ | हमारे ऋषियों ने, स्वयं को दिव्य साक्षात्कार से उत्पन्न; अपौरुषेय ज्ञान को ही 'वेद' कहा है | ज्ञान मार्ग से ईश्वर साक्षात्कार किया जा सकता है | परंतु परमात्मा के लिए **'भाव' सर्वोपरि** है तथा मनुष्य के ह्रदयान्तर्गत भावों में से, परमात्मा के प्रति अर्पण किया जानेवाला **विशुद्ध भाव 'भक्ति'** है | अतः **'ज्ञान' और 'भावना' का संयोग** ही **ईश्वर साक्षात्कार** का सुनिश्चित आधार बनता है |[50] देवी भागवत मे भी हमे ऐसा ही प्रमाण मिलता है, **"भक्ति की चरम सीमा ही ज्ञान है |"**[51]

'वेद' अनुभूतिजन्य 'ज्ञान' है तथा 'साम' को 'गान' कहा जाता है | कोई भी अनुभूति जन्य ज्ञान को, कोई भी देशकाल से परे, शब्दों के द्वारा अभिव्यक्त करने की तीन धाराएँ है जैसे 'गद्य', 'पद्य' एवं 'गान'; तथा ईश्वर प्राप्ती के लिए 'ज्ञान' और 'भावना' का संयोग होना जरूरी है यह 'सामवेद संहिता' का शास्त्रसंम्मत विधान भी हमें ज्ञात है | अतः वेदों के ज्ञान को अभिव्यक्त करनेवाली 'भाषा' को भावपूर्ण बनाने के प्रयास मे मंत्र बने यह उल्लेख पं श्रीराम शर्मा आचार्य जी के 'सामवेद संहिता' में मिलता है |[52] और यही मंत्रों को 'गान' से जोड दिया जाय तो -'सामगान' में 'भाव संयोग' अधिक पूर्णता से उभर आता है यह एक सर्वज्ञात तथ्य है |

---

[49] गोयन्दका जयदयाल. *श्रीमद्भागवद्गीता.*(अठारहवाँ पुनर्मुद्रण)गीतप्रेस, गोरखपुर. पृष्ठ 250
[50] शर्मा श्रीराम(1997). *सामवेद संहिता.* (सप्तम आवृत्ती) ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज, हरिद्वार पृष्ठ 5
[51] अभ्यंकर शंकर(1998). *भक्तिकोश, द्वितीय खंड.* पुणे: आदित्य प्रकाशन। पृष्ठ 15
[52]शर्मा श्रीराम(1997). *सामवेद संहिता.* (सप्तम आवृत्ती). हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज, पृष्ठ 6

इस प्रकार से, **वेद के मंत्रों को गान के साथ समर्पित करने से 'सामवेद'** का निर्माण हुआ|

'साम' शब्द की व्युत्पत्ति को समझे तो सा + अम: = साम: | यहाँ 'सा' याने 'ऋचा' (चरण युक्त मंत्र) और 'अम' याने 'आलाप'(सप्त सुरों के माध्यम से) | निष्कर्षतः ऋचाओं का सप्तस्वर युक्त गान 'साम' कहा जाता है |[53]

यज्ञ प्रसंगों पर किये जानेवाले 'सामगान' का उद्देश्य, देवताओंकि स्तुति करना या उन्हे संतुष्ट करना-प्रसन्न करना था| इस प्रकार से वैदिक काल से चली आ रही हमारी **'ज्ञानमार्गी एवं कर्मकांड'** की परंपरा के मूल में **"श्रद्धा" और "भक्ति"** ही है | क्योंकि परमात्मा के प्रति निस्सीम आस्था एवं भक्ति के बीना, घंटों तक यज्ञ यागदी करना संभव नहीं | निष्कर्षतः **'सामगान' भी ओतप्रोत 'भक्ति'** भाव से ही सम्पन्न होता होगा | यही वैदिक काल का 'भक्ति संगीत' है और उस काल से आज के आधुनिक काल तक भक्ति संगीत की ये अनंत धारा जीवित है | अतः भारतीय संगीत प्रधान रूप से भक्ति संगीत ही है | इतना ही नहीं अपितु, संगीत की उत्पत्ति का प्रयोजन, सरलता से भगवत् प्राप्ती करने के लिए है | संगीत पारिजात में हमे इसी संदर्भ में प्रमाण मिलता है |

विष्णुनामानि पुण्यानि सुस्वरैरान्वितानि चेत् |
भवन्ति सामतुल्यानि कीर्तितानी मनीषिभि: ||[54]

अर्थात अगर ताल स्वर के साथ भगवान का नाम लिया जाय तो 'सामगान' के जैसा फल मिलता है |

---

[53] शर्मा श्रीराम(1997). *सामवेद संहिता.* (सप्तम आवृत्ती). हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज पृष्ठ 11
[54] शर्मा श्रीराम(2007). *शब्द ब्रह्म- नाद ब्रह्म.* मथुरा : युगनिर्माण योजना,गायत्री तपोभूमि,.पृष्ठ 63

हमारे शास्त्रों से प्राप्त, गान या संगीत के बारे में और कुछ प्रमाण के अनुसार – शास्त्रकार लिखते है कि, “स्वरेण सँल्लयेद्योगी”|[55] अर्थात स्वर साधना के द्वारा योगी स्वयं को एकाग्र कर सकते है |

“स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिन:”|[56]

अर्थात, “ हे शिष्य तुम अपने आत्मिक उत्थान से मेरे पास आए हो | मै तुम्हें ईश्वर का उपदेश देता हूँ | तुम उसे प्राप्त करने के लिए संगीत के साथ उसे पुकारोगे, तो वह तुम्हारी हृदय गुफा में प्रकट होकर अपना प्यार प्रदान करेगा |”

पं शारंगदेव ने अपने ग्रंथ ‘संगीत रत्नाकर’ के स्वर गीताध्याय-प्रथम आध्याय में, संगीत के द्वारा ईश्वर प्रसन्न होने के प्रमाण दिए है |

गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञ: पार्वतीपति: |

गोपीपतिरन्तोऽपि वंश-ध्वनि-वंशगतः ||[57]

भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को, रणभूमि में ‘श्रीमद भगवतगीता’ वीर रस की निष्पत्ति करते हुए गाकर सुनाई |

[55] शर्मा श्रीराम(1997). *सामवेद संहिता.* (सप्तम आवृत्ती) ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज, हरिद्वार पृष्ठ 7

[56] शर्मा श्रीराम(1997). *ऋग्वेद संहिता.भाग 3, मण्डल 7-8* (सरल भावार्थ सहित) हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, शांतिकुंज, पृष्ठ 83

[57] गोस्वामी हरीकिशन(2014). *भारतीय संगीत की परम्परा वंशानुक्रम एवं वातावरण.*(द्वितीय संस्करण). नई दिल्ली : कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स. पृष्ठ 3

हमे ज्ञात है कि, वेदकाल के **ऋषियों** से लेकर आज के **संतों** तक, सभी ने; साधना से प्राप्त अपनी स्वानुभूति को **'साम', 'दोहा', 'भजन', 'भक्ति गीत', 'अभंग' या 'प्रार्थना'** के रूप में छंदबद्ध किया है |

इस प्रकार से हमारे **ऋषि-मुनि, संत तथा आचर्यों ने सर्व साधारण जनमानस को भारतीय (भक्ति) संगीत के माध्यम से दुखः निवृत्ति एवं शाश्वत सुख का मार्ग, आत्मानुभूति से बताया है |**

उपरोक्त विवेचन से, **वेद-पुराण काल से चली आयी (भक्ति)संगीत की महत्ता स्पष्ट होती है|**

इस प्रकार से, इस द्वितीय आध्याय में, शोधार्थी ने भगवत् प्राप्ति के दो मार्ग; 'अध्यात्म मार्ग' तथा 'भक्तिमार्ग' की समीक्षा करनेका प्रयास किया है | हमारे संतों ने, सनातन धर्म के रक्षण हेतु, लोकजागरण के साथ साथ लोकोद्धार के उद्देश्य से; विशुद्ध भक्ति तथा भक्तिमार्ग की सुगमता को सिद्ध करने के लिए "भक्ति आंदोलन" का आश्रय लिया | आँठवी शती से शुरू हुए इस 'भक्ति आंदोलन' का प्रभाव, हमारे समाज पर आज तक दिखाई देता है; जिसमें शास्त्रीय संगीत गानेवाले कलाकारों ने अपने संगीत के माध्यम से, 'संत साहित्य' को घर घर तक पहुँचानेका किया हुआ कार्य अभूतपूर्व है| अतः शास्त्रीय संगीत के साथ साथ, भक्ति संगीत के माध्यम से; लोगों के मानस पर अपनी छवि चिरस्थायी करनेवाले कुछ प्रमुख शास्त्रीय संगीत के कलाकारोंका परिचय एवं योगदान स्पष्ट करनेका प्रयत्न, शोधार्थी ने अपने अगले, तृतीय आध्याय में किया है |